भावी शिक्षा नीति एवं शिक्षकों की अपेक्षाएँ

केवलानंद कांडपाल *

हमारी संवैधानिक व्यवस्था में शिक्षा 'समवर्ती सूची' में शामिल है परंतु व्यवहार में केंद्र की अधिभाविता है। भावी शिक्षा नीति को लेकर विचार-विमर्श का क्रम चल रहा है। अतः यह उपयुक्त अवसर है कि इस समय का उपयोग भारतीय संघ के सभी राज्यों से व्यापक विमर्श एवं रचनात्मक भागीदारी के लिए किया जाए जिससे एक ऐसी राष्ट्रीय शिक्षा नीति बने जो सारे देश की आकांक्षाओं को संबोधित करने में सक्षम हो। शिक्षा के विभिन्न हितधारकों (Stakeholders) को शिक्षा नीति से अपेक्षा होना स्वाभाविक है। इस मामले में शिक्षकों की भी अपेक्षाएँ होना स्वाभाविक है। शिक्षा-कर्म का सक्रिय हितधारक होने के कारण शिक्षकों की अपेक्षाओं का औचित्यपूर्ण संज्ञान लिया जाना चाहिए। विगत की शिक्षा नीतियों में नीतिगत दृष्टि शिक्षकों के बारे में किस प्रकार से विचार किया गया? शिक्षकों की अपेक्षाओं को किस प्रकार से सुबोधित किया गया? शिक्षकों की भावी शिक्षा नीति से मुख्य रूप से क्या अपेक्षाएँ हैं? शिक्षकों से बातचीत, विचार-विमर्श करने के क्रम में भावी शिक्षा नीति से शिक्षकों की अपेक्षाओं के संकेत मिले। प्रस्तुत आलेख में भावी शिक्षा नीति से शिक्षकों की इन्हीं अपेक्षाओं को इस आलेख में प्रस्तुत करने का प्रयास है।

किसी भी देश की शिक्षा नीति, शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अपनाये जाने वाले उपक्रमों एवं इस उपक्रम से जुड़े शिक्षकों, प्रशिक्षण संस्थानों, उच्च शिक्षा संस्थानों, प्रशासकों एवं नीति निर्धारकों के लिए दिशा-निर्देशक दस्तावेज होती है। भारत में अभी तक शिक्षा नीति संबंधी दो दस्तावेज सामने आए हैं — पहला, वर्ष 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति दस्तावेज, हालाँकि इसका बहुत सीमित व्यावहारिक संज्ञान लिया गया। तत्समय देश

* जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, बागेश्वर, जनपद बागेश्वर, उत्तराखंड

खाद्यान्न एवं औद्यौगिक विकास के बहुत सारे दूसरे मसलों पर जूझ रहा था, अत: इस ओर बहुत ध्यान नहीं जा पाया। दूसरा, इसके बाद वर्ष 1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति, वर्ष 1992 में इस शिक्षा नीति की कार्य योजना 1992 (प्रोग्राम ऑफ़ एक्शन 1992) सामने आई। इसमें शिक्षा नीति को लेकर बहुत ही रचनात्मक सुझाव एवं अनुशंसाएँ की गई थीं। इन दो दस्तावेजों के दौरान विश्वविद्यालयी शिक्षा आयोग (1948-49), मुदालियर आयोग (1952–53), कोठारी आयोग (1964–66) के प्रतिवेदन भी सामने आए। बाद के वर्षों में शिक्षक शिक्षा पर आचार्य राममूर्ति समिति (1988), यशपाल समिति (1992–93) का प्रतिवेदन 'शिक्षा बिना बोझ के', चट्टोपाध्याय समिति (1983) की रिपोर्ट आई। शिक्षकों की शैक्षिक एवं प्रशिक्षण योग्यताओं को विनियमित करने के उद्देश्य से वर्ष 1993 में राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् के नाम से संवैधानिक संस्था अस्तित्व में आई।

इस प्रकार शिक्षा नीति की कार्य योजना 1992 (प्रोग्राम ऑफ़ एक्शन 1992) के बाद लगभग 23 वर्षों का समय गुज़र गया है। अतः यह स्वाभाविक है कि विगत शिक्षा नीतियों की समीक्षा हो, व्यापक विमर्श हो। यह सुखद है कि आगामी राष्ट्रीय शिक्षा नीति पर औपचारिक विचार-विमर्श की शुरुआत हो रही है। इस दौर में यह ज़रूरी हो जाता है कि शिक्षा से जुड़े सभी हितधारक (Stakeholders) शिक्षक, शिक्षक-प्रशिक्षक, शिक्षा प्रशासक, नीति नियामक, अभिभावक एवं समाज में व्यापक विचार-विमर्श हो, रचनात्मक सुझाव देकर एक ठोस शिक्षा नीति के विकास में भागीदारी करें। इस नीति का असर आगामी समय में वर्षों, संभव है दशकों तक समाज पर पड़ना लाज़िमी है। अतः समाज में व्यापक बहस एवं गहन विमर्श के पश्चात् नीति का खाका तैयार किया जाना चाहिए।

हमारी संवैधानिक व्यवस्था में शिक्षा 'समवर्ती सूची' में शामिल है, इसमें व्यावहारिक व्यवस्था यह है कि 'शिक्षा' विषय पर केंद्र एवं राज्य दोनों ही विधि निर्माण कर सकते हैं, दोनों के कानूनों में विरोधाभास होने पर केंद्र के कानूनों को अधिमान्यता मिलेगी। एक प्रकार से केंद्र की प्रभावी शक्तियाँ हैं। अतः यह उपयुक्त अवसर है कि इस समय का उपयोग भारतीय संघ के सभी राज्यों से व्यापक विमर्श एवं रचनात्मक भागीदारी के लिए किया जाए, ऐसी राष्ट्रीय शिक्षा नीति बने जो सारे देश की आकांक्षाओं को संबोधित करने में सक्षम हो।

सेवाक्रम में, मैं एक ऐसे संस्थान (डायट) से जुड़ा हूँ जो प्रारंभिक शिक्षकों के सेवा-पूर्व एवं सेवारत प्रशिक्षण के लिए जवाबदेह है, इस प्रकार से मेरा सरोकार प्रारंभिक शिक्षा और उसमें भी शिक्षक है, अत: मेरा विमर्श इसी मुद्दे पर केंद्रित है।

कोई भी नीति निरंतरता एवं सातत्य में होनी चाहिए, शिक्षा नीति के बारे में भी यह बात लागू होती है। अव्वल तो यह होना चाहिए कि शिक्षा नीति को लेकर एक श्वेत पत्र लाया जाए, जिसमें शिक्षा के स्टेटस, विगत नीतियों, इनके क्रियान्वयन को लेकर वस्तु स्थिति स्पष्ट हो, खामियों एवं चूक के मद्देनजर समीक्षा की जाए।

यह देखना दिलचस्प होगा कि शिक्षकों के संदर्भ में विगत की शिक्षा नीतियों में क्या-क्या कहा गया?

किस प्रकार की अपेक्षा की गई थी? शिक्षकों से जुड़े मुद्दों को किस प्रकार से संबोधित किया गया? इससे भावी शिक्षा नीति के विमर्श को दिशा मिल सकेगी।

1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति एवं शिक्षक

इस शिक्षा नीति में मुख्यतः कोठारी आयोग (1964–66) की अनुशंसाओं का संज्ञान लिया गया था। इस आयोग का प्रतिवेदन एक बहु-प्रशंसित वाक्य से प्रारंभ होता है "भारत के भविष्य का निर्माण कक्षा-कक्षों में हो रहा है।" (The destiny of India is taking shape in the classroom)। इसमें संविधान के अनुच्छेद 45 की भावना के अनुरूप 14 वर्ष आयु-वर्ग के बच्चों के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा हेतु गंभीर प्रयासों की आवश्यकता को रेखांकित किया गया था। शिक्षकों के बारे में इस नीति में कुछ इस प्रकार से कहा गया है।

- अध्यापकों की स्थिति (Status), परिलब्धियाँ (Emoluments) एवं अध्यापक शिक्षा (Teacher Education) इस संदर्भ में कहा गया कि शिक्षा की गुणवत्ता एवं शिक्षा के राष्ट्रीय विकास में योगदान को प्रभावित करने वाले कारकों में निःसंदेह अध्यापक के गुण एवं चरित्र सबसे महत्वपूर्ण घटक हैं। शिक्षक की शैक्षणिक योग्यता एवं पेशेवर दक्षता वह महत्वपूर्ण घटक है जिस पर किसी भी शैक्षिक प्रयास की सफ़लता निर्भर करती है। अतः शिक्षकों को समाज में सम्मानजनक स्थान मिलना चाहिए। शिक्षकों को पर्याप्त परिलब्धियाँ दी जानी चाहिए, शिक्षकों की सेवा शर्तें उनकी योग्यताओं एवं दायित्वों के सापेक्ष होनी चाहिए।
- शिक्षकों को स्वतंत्र अध्ययन एवं शोधों के प्रकाशन, महत्वपूर्ण राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों पर बोलने एवं लिखने की अकादमिक स्वतंत्रता मिलनी चाहिए।
- शिक्षक शिक्षा विशेषकर सेवारत शिक्षा पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति एवं कार्य योजना 1992 एवं शिक्षक

इस शिक्षा नीति के भाग IX में शिक्षकों से संबंधित मुद्दों को संबोधित किया गया है जिसके उल्लेखनीय बिंदु निम्नवत हैं—

- अध्यापक की स्थिति समाज की सामाजिक-सांस्कृतिक लोकाचार को परिलक्षित करती है। यह कहा जाता है कि कोई भी व्यक्ति अपने शिक्षकों के स्तर से ऊँचा नहीं उठ सकता है। अतः सरकार एवं समुदाय को प्रयास करना चाहिए कि ऐसी परिस्थितियाँ सृजित की जाएँ कि अध्यापक रचनात्मक एवं सृजनात्मक पथ पर आगे बढ़ने के लिए अभिप्रेरित हो सकें। अध्यापक को नवाचार की स्वतंत्रता, संप्रेषण की समुचित विधियों को अपनाने और समुदाय की आवश्यकताओं एवं क्षमताओं के अनुसार गतिविधि आयोजन की स्वतंत्रता हो।
- गुणवत्ता, उद्देश्यपरकता एवं कार्यात्मक आवश्यकता को सुनिश्चित करने के लिए अध्यापकों की भर्ती प्रणाली को पुनर्गठित किया जाएगा। अध्यापकों के सामाजिक एवं पेशेवर उत्तरदायित्वों के समनुरूप वेतन एवं

सेवा शर्तें निर्धारित की जाएँगी जिससे बेहतर प्रतिभाओं को इस पेशे में आकर्षित किया जा सके। यह प्रयास किया जाएगा कि अध्यापकों की परिलब्धियों, सेवा शर्तों में एकरूपता हो, परिवेदना निवारण हेतु पूरे देश में एक तंत्र स्थापित किया जाए। अध्यापकों की नियुक्ति एवं पदस्थापन हेतु उद्देश्य परक दिशा-निर्देश तैयार किए जाएँगे। अध्यापकों के मूल्यांकन हेतु व्यवस्थागत उपाय किए जाएँगे जो खुली एवं भागीदारी आधारित डाटा बेस प्रणाली पर आधारित होंगे, जिससे उच्च स्तर पर पदोन्नति औचित्यपूर्ण अवसर दिए जा सकें। जवाबदेही हेतु मानक निर्धारित किए जाएँगे, बेहतर प्रदर्शन हेतु इन्सेंटिव दिये जाएँगे, वहीं ऐसा न करने वालों को इससे वंचित किया जाएगा। शैक्षिक कार्यक्रमों के निर्माण एवं क्रियान्वयन में अध्यापकों की अहम् भूमिका होगी।

- पेशेवर अखंडता (Integrity) को कायम रखने एवं अध्यापक की गरिमा को बढ़ाने में शिक्षक संघों की महत्वपूर्ण भूमिका होनी चाहिए। पेशेवर दुराचरण को संबोधित करने में शिक्षक संघों को दायित्व लेना होगा। राष्ट्रीय स्तर शिक्षक संघ पेशेवर संहिता (Proffesional Ethics) कर सकते हैं तथा इसके अनुपालन की मॉनीटरिंग करें।
- शिक्षक शिक्षा के बारे में कहा गया कि यह एक सतत प्रक्रिया है, सेवा-पूर्व एवं सेवारत शिक्षा दोनों घटकों को अलग-अलग नहीं देखा जाना चाहिए। इसके लिए प्रथम चरण में शिक्षक शिक्षा की वर्तमान व्यवस्था की पूरी जाँच करके आवश्यक सुधार किये जाएँगे।
- सेवा-पूर्व एवं सेवारत शिक्षा हेतु जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (डाइट) स्थापित किए जाएँगे और उन्हें सेवा-पूर्व एवं सेवारत शिक्षक शिक्षा हेतु सामर्थ्यवान बनाया जाएगा। डाइट की स्थापना के बाद दोयम दर्जे के प्रशिक्षण संस्थानों को क्रमशः बंद कर दिया जाएगा। चयनित शिक्षक प्रशिक्षण कॉलेजों को राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषदों के रूप में स्तरोन्नयन किया जाएगा। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् को आवश्यक संसाधन उपलब्ध कराए जाएँगे जिससे शिक्षक-शिक्षा संस्थानों का मूल्यांकन कर सकें, पाठ्यचर्या निर्माण में मार्गदर्शन कर सकें। शिक्षक शिक्षा संस्थानों एवं विश्वविद्यालयों के मध्य नेटवर्किंग की जाएगी।

जैसा कि पूर्व में कहा गया है कि शिक्षा नीति को इसकी निरंतरता एवं सातत्य में देखा जाना चाहिए। यहाँ शिक्षा नीति की निरंतरता एवं सातत्य के दो परिप्रेक्ष्य हैं —

प्रथम — विगत की शिक्षा नीतियाँ भावना के स्तर पर तो एकदम से ठीक थीं, कम से कम तत्कालीन समय के सापेक्ष उपयुक्त थीं परन्तु उसकी मंशाओं एवं आकांक्षाओं को क्रियान्वित करने के लिए धरातल पर कुछ ठोस नहीं किया जा सका। इसके कारणों की भी जाँच-पड़ताल होनी चाहिए जिससे आगामी समय में वही गलतियाँ न दोहरायी जाएँ। विगत की शिक्षा

नीतियों को सिरे से नकारने के बजाए क्रियान्वयन की खामियों को चिन्हित किया जाए, विगत की शिक्षा नीतियों में सुझाई गयीं बहुत-सी बातें आज प्रासंगिक हो सकती हैं।

द्वितीय — बदलती परिस्थितियों के आलोक में शिक्षा नीति पर पुनर्विचार करना भी ज़रूरी हो जाता है। भारत में विशेषकर वर्ष 1991 के बाद उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण की नीतियों के लागू होने के बाद व्यापक बदलाव आये हैं, शिक्षा पर भी इसका व्यापक प्रभाव पड़ा है। फिर 1986 की शिक्षा नीति के लगभग तीन दशकों बाद पुनर्विचार करना समीचीन है। यहाँ पर आग्रह बस इतना है कि बदलती परिस्थितियों के साथ-साथ विगत शिक्षा नीति का भी संज्ञान लिया जाना चाहिए। जिससे आगामी शिक्षा नीति विगत की क्रियान्वयन की खामियों के साथ-साथ भावी चुनौतियों को संबोधित करने में सक्षम हो।

भावी शिक्षा नीति से शिक्षकों की अपेक्षाएँ— किसी भी देश का सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक स्तर शिक्षक के स्तर के समनुरूप होता है, विगत में शिक्षा आयोग एवं शिक्षा नीतियों ने इस तथ्य को रेखांकित भी किया है। इस अपेक्षित स्तर को प्राप्त करने के लिए अन्य बातों के अलावा शिक्षकों की अपेक्षाओं का जानना-समझना बहुत ज़रूरी हो जाता है। विगत की शिक्षा नीतियों का विश्लेषण किया जाए तो इसमें शिक्षकों के सम्मान, सम्मानजनक परिलब्धियाँ, सेवा शर्तें, कैरियर विकास, पेशेवर दृष्टिकोण, शिक्षक-शिक्षा, प्रोत्साहन, अभिप्रेरण, नवाचार एवं स्वायत्तता के बारे में बहुत अच्छी-अच्छी परिकल्पनाएँ की गई हैं परंतु धरातल पर कुछ ठोस घटित होता दिखायी नहीं दिया। छठे वेतन आयोग की सिफ़ारिशों के बाद शिक्षकों की परिलब्धियों में सुधार तो हुआ है परंतु हम दावे से नहीं कह सकते यह सम्मान से प्राप्त हुआ है। इसके लिए अलग-अलग राज्यों में आंदोलन एवं संघर्ष के उपक्रम चले हैं। शिक्षकों की सेवा-पूर्व एवं सेवारत शिक्षा के लिए डाइटों की स्थापना होने के बावजूद इनकी इस क्षेत्र में क्षमता संवर्द्धन हेतु कुछ ठोस नहीं हो सका। राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषदें, शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र में अकादमिक नेतृत्व देने में विफ़ल रही हैं, शैक्षिक प्रशिक्षण की ठोस योजनाएँ बनाने में नाकाम रही हैं। कुछेक राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषदें अपवाद स्वरूप हो सकती हैं। शिक्षकों की भर्ती हेतु शैक्षिक एवं प्रशिक्षण योग्यताओं के विनियमन हेतु राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् शिक्षक शिक्षा संस्थानों को मान्यता के मुद्दों पर ही इतनी व्यस्त हो गई कि शेष मुद्दों के लिए समय ही नहीं निकाल पा रही है जबकि इसकी सक्रियता शिक्षकों के पेशेवर विकास में बहुत मददगार हो सकती थी। स्थानांतरण एवं पदोन्नतियों की ढुल-मुल नीतियाँ लागू हैं। शिक्षकों के कैरियर विकास के ठोस कार्यक्रम नज़र नहीं आते, शिक्षकों के पेशेवर विकास के लिए संस्थागत प्रयासों का अभाव है। शिक्षकों की स्वायत्तता के मुद्दे पर धरातल में कुछ ठोस नहीं हो पाया है। यदि इसे अतिरेक न समझा जाए तो शिक्षा नीतियाँ अध्यापकों के संदर्भ में गरिमा एवं सम्मान का यशोगान प्रतीत होती हैं।

इस बीच 6 से 14 आयु वर्ग के बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा (कक्षा 8 तक)

की संवैधानिक व्यवस्था की गयी है। इसके लिए 1 अप्रैल से बच्चों का निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 पूरे देश में (जम्मू एवं कश्मीर को छोड़कर) लागू भी हो गया है। इस अधिनियम में शिक्षकों के दायित्वों, शिक्षक-छात्र अनुपात, शिक्षकों की शैक्षिक एवं प्रशिक्षण योग्यताओं का निर्धारण, गैर शैक्षणिक कार्यों में नियोजन पर प्रतिबंध मुद्दों को संबोधित किया गया है, परन्तु शिक्षकों की स्वायत्तता, कैरियर विकास, सतत् पेशेवर विकास जैसे मुद्दों को इसमें शामिल नहीं किया गया है। शिक्षण कार्य को पेशेवर पहचान देने के कुछ मुद्दे इसमें शामिल तो हैं ही, वैसे भी यह अधिनियम बच्चों के संवैधानिक अधिकार के मुद्दों को संबोधित है। अतः शिक्षकों के मामले में इसमें बहुत सीमित गुंजाइश थी। यह अधिनियम प्रारंभिक शिक्षकों पर लागू होता है, अतः शेष शिक्षकों के मामले में स्थितियाँ यथावत् हैं।

भावी शिक्षा नीति को लेकर शिक्षकों की अपेक्षाओं को समझने का प्रयास किया जाए तो शिक्षकों से बातचीत के क्रम में प्रमुख रूप से निम्न अपेक्षाएँ सामने आती हैं —

1. शिक्षकों की स्वतंत्रता एवं स्वायत्तता

वर्तमान में पाठ्यचर्या निर्धारण में शिक्षकों की नगण्य भूमिका है। पाठ्य-सामग्री विकास में शिक्षकों की इतनी भर भूमिका है कि कुछेक गिन-चुने शिक्षक पाठ्यपुस्तकों के लेखन एवं संपादन में योगदान करते हैं। कक्षा-कक्ष प्रक्रिया में भी अध्यापक स्वायत्त नहीं है, उसे अनेकानेक आदेशों एवं निर्देशों के अनुरूप शिक्षण कार्य पूरा करना होता है। परीक्षा प्रश्न-पत्रों का निर्माण कार्य कोई अन्य करता है, जिसका बच्चों के शिक्षण से कोई सीधा संबंध नहीं है। अध्यापक को पाठ्य-सामग्री के चयन, शिक्षण विधियों में नवाचार के मामलों में अव्वल तो स्वतंत्रता है ही नहीं, यदि कोई शिक्षक साहस करके स्वतंत्रता लेना भी चाहता है तो परीक्षा प्रणाली उसे ऐसा करने से रोक देती है क्योंकि इसका आयोजन परंपरागत ढर्रे पर किया जाता है, इससे अध्यापक के स्वायत्त प्रयासों में बाधा पहुँचती है। स्वायत्तता के मुद्दे पर शिक्षकों की निम्नांकित स्पष्ट अपेक्षाएँ हैं —

- पाठ्यचर्या निर्धारण एवं निर्माण में अध्यापक की सहभागिता हेतु संस्थागत व्यवस्था की जाए। निर्धारित पाठ्यचर्या के अनुरूप विद्यालयी पाठ्यचर्या के निर्धारण एवं संचालन में अध्यापकों की स्वायत्तता हेतु नीतिगत उपाय किए जाने चाहिए।
- विद्यालय स्तर पर वर्ष भर की शैक्षिक एवं सह-शैक्षिक गतिविधियों के निर्धारण हेतु विद्यालयों को स्वायत्तता मिलनी चाहिए। विद्यालय अपना वार्षिक शैक्षिक पंचांग बनाने के लिए स्वतंत्र हों।
- पाठ्य-वस्तु एवं विषय सामग्री के चयन में अध्यापक को स्वायत्तता मिले जिससे उनको पाठ्यपुस्तकों से बाहर निकलने के अवसर मिल सकें। निश्चित रूप से इसके लिए परीक्षा प्रणाली में व्यापक बदलाव करने की आवश्यकता होगी।
- इसके लिए शिक्षा नीति में कार्य योजना एवं इसके क्रियान्वयन हेतु समुचित उपबन्ध किए जाएँ।
- वस्तुतः छात्र का मूल्यांकन वही शिक्षक करें

जो उसकी शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया से जुड़े हैं। मूल्यांकन (परीक्षा) के मामलों में शिक्षकों पर विश्वास किया जाए, अधिगमकर्ता की प्रगति के आंकलन में स्वायत्तता हेतु नीतिगत उपाय किए जाएँ।

- उक्त स्वतंत्रता एवं स्वायत्तता समानुपातिक रूप से जवाबदेही सृजित करती है, अतः शिक्षक की कार्यकारी स्वायत्ता के सापेक्ष जवाबदेही सुनिश्चित की जाए।

2. सुनिश्चित कैरियर विकास

इस संदर्भ में शिक्षकों की निम्नांकित अपेक्षाएँ हैं–

- शिक्षकों के पदस्थापन, समयबद्ध स्थानान्तरण एवं पदोन्नति हेतु स्पष्ट नीति निर्धारित हो। एक निर्धारित समय के बाद इच्छित स्थानों पर स्थानान्तरण हेतु पारदर्शी स्थानांतरण नीति लागू की जाए। पदोन्नति एवं उच्च पदों पर कार्य करने हेतु समयबद्ध अवसर उपलब्ध हों।
- शिक्षकों के कार्य का मूल्यांकन वार्षिक अप्रैज़ल पद्धति (Annual Appraisal System) के अनुसार किया जाए। बेहतर प्रदर्शन करने वाले शिक्षकों को कैरियर में आगे बढ़ने के स्पष्ट अवसर उपलब्ध हों, वहीं इसमें असफ़ल रहने वाले शिक्षकों की जवाबदेही सुनिश्चित की जाए।
- उच्च पदों पर पदोन्नति हेतु ज्येष्ठता (Seniority) के साथ-साथ श्रेष्ठता का भी संज्ञान लिया जाए।
- इन दोनों आधारों में एक सुसंगत एवं न्यायोचित संतुलन स्थापित किया जाए। एक उम्र के बाद पदोन्नति उत्साह पैदा नहीं करती वरन् एक तरह से अनभिप्रेरित (Demotivate) करती है। समयबद्ध पदोन्नति की स्पष्ट नीति लागू की जाए, इसे विभागीय उच्चाधिकारियों की मंशा पर न छोड़ जाए। इसके लिए पृथक से राज्य स्तरीय शिक्षा सेवा का गठन किया जाए। यह शिक्षा सेवा विद्यालयी शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक सुनिश्चित कैरियर विकास की मॉनीटरिंग करे। इसी प्रकार की शिक्षा सेवा का गठन अखिल भारतीय स्तर पर किया जाए जो राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षकों के कैरियर विकास के मुद्दों को संबोधित करे।
- विभाग में उच्च पदों पर कार्य करने के अवसर हेतु विभागीय परीक्षा प्रणाली लागू की जाए जिससे कैरियर विकास के अवसर उपलब्ध हो सकें।
- शिक्षकों के बेहतर प्रयासों एवं प्रदर्शन को मान्यता देने, पुरस्कृत करने हेतु निष्पक्ष एवं पारदर्शी प्रणाली लागू की जाए। यह बहुत आश्चर्यजनक है कि पुरस्कार हेतु शिक्षक द्वारा स्वयं फ़ाइल तैयार की जाती है, उच्च स्तर पर क्रमश: इस फ़ाइल की जाँच करके पुरस्कार हेतु शिक्षक का चयन किया जाता है। इसमें पैरवी, सिफारिशों की गुंजाइश बहुत अधिक होती हैं। अतः यह शिक्षकों को बेहतर प्रदर्शन के लिए अभिप्रेरित नहीं करती और अविश्वास पैदा करती है। इसके बजाय शिक्षक के वार्षिक अप्रैल के आधार पर प्रतिवेदन का संज्ञान लेते हुए बेहतर कार्य एवं प्रदर्शन करने वाले शिक्षकों

का चिन्हांकन किया जाए, जाँच-पड़ताल की जाए तत्पश्चात् निष्पक्ष एवं पारदर्शी निर्णय लिए जाएँ। यह प्रणाली शिक्षकों को अभिप्रेरित करने के साथ-साथ उनमें सम्मान का भाव पैदा होगा।

- शिक्षकों की परिलब्धियाँ एवं अन्य सुविधाएँ सम्मानजनक आधारों पर निर्धारित की जाएँ और इसको सम्मानजनक तौर तरीकों से लागू भी किया जाए। एक शिक्षक को भी सम्मानजनक जीवन जीने का हक है। इसके लिए मान-सम्मान के प्रशस्तिगान के अलावा सम्मानजनक मानदेय एवं परिलब्धियों की भी आवश्यकता होती है। बेहतर प्रतिभाएं इस पेशे में आएँ इसके लिए इस दिशा में कुछ ठोस नीतिगत निर्णय लेने की आवश्यकता है।

3. सतत पेशेवर विकास

शिक्षण कार्य कमोवेश एक पेशेवर कार्य है, अतः अन्य पेशों के समान ही शिक्षकों को पेशेवर विकास के सतत अवसर प्राप्त हों। इस पीरप्रेक्ष्य में शिक्षकों की निम्न अपेक्षाएँ हैं —

- शिक्षकों की सेवा-पूर्व एवं सेवारत शिक्षा एवं प्रशिक्षण उनकी पेशेवर ज़रूरतों के अनुरूप हो, शिक्षकों की आवश्यकताओं को संबोधित कर सकें।
- विद्यालयों में सकारात्मक वातावरण (Condusive Environment) उपलब्ध हो जिससे शिक्षक अपने शैक्षिक एवं प्रशिक्षण अनुभवों को बेहतर ढंग से विद्यालयों में क्रियान्वित कर सकें।
- जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थानों को इस तरह से साधन संपन्न एवं क्षमतावान बनाया जाए कि बदलते परिदृश्य के अनुरूप पेशेवर ज़रूरतों के अनुसार शिक्षण एवं प्रशिक्षण आयोजित कर सकें।
- शिक्षक शिक्षा विद्यालयों (College of Teacher Education) को सक्रिय एवं प्रभावी बनाया जाए जिससे शिक्षक अपनी पेशेवर ज़रूरतों के अनुरूप विभिन्न कोर्स कर सकें। इसके लिए विभागीय अनुमति एवं अनुमोदन की प्रक्रिया को स्वचालित (Automated) किया जाए।
- उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थानों (Institute of Advanced Studies in Education) को सक्रिय एवं सक्षम बनाया जाए जिससे शिक्षकों को शिक्षा में उच्च स्तरीय अध्ययन एवं शोध के अवसर मिल सकें। निर्धारित मानकानुसार प्रतिवर्ष शिक्षकों को स्पॉन्सर करने के संस्थागत प्रावधान किए जाएँ जिससे एक निर्धारित समयोपरान्त सभी शिक्षक इस प्रक्रिया से लाभान्वित हो सकें।
- शिक्षकों को शोध करने, शोध आधारित आलेखों के प्रकाशन, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों पर लिखने एवं विचार व्यक्त करने की स्वतंत्रता मिले और ऐसे अवसर देने हेतु उपयुक्त फ़ोरम उपलब्ध हों। अध्यापकों को अपने शोध-पत्रों, शोध आलेखों एवं नवाचारों को सेमिनारों एवं सिम्पोज़ियम में प्रस्तुत करने के अवसर मिलें। इसके लिए राज्य स्तर/राष्ट्रीय

स्तर के शैक्षिक सेमिनारों की नेटवर्किंग की जाए, इसका एक वार्षिक कलैंडर तैयार किया जाए जिसमें शिक्षक अपनी ज़रूरतों के अनुसार प्रतिभागिता कर सकें। पदोन्नति एवं उच्च पदों पर कार्य करने के अवसरों में इन अध्ययन एवं शोधों का संज्ञान लिया जाए। इसके लिए गुणांक प्रणाली लागू की जाए, ऐसी ही व्यवस्था शैक्षिक नवाचारों के संदर्भ में अपनायी जाए।

- शिक्षक को प्रत्येक तीन वर्ष में एक बार एल.टी.सी. की तर्ज पर शैक्षिक भम्रण की सुविधा प्राप्त हो। इसका उपयोग शिक्षक अपनी पेशेवर ज़रूरतों के अनुरूप उच्च शैक्षिक एवं शोध संस्थानों के भम्रण, सेमिनारों में प्रतिभाग, लघुशोध एवं अन्य अकादमिक उद्देश्यों के लिए कर सकें। सुविधा उपभोग के पश्चात् आख्या प्रस्तुत करने जाएँ, इसके बाद ही देयकों का भुगतान/समायोजन किया जाए। यह प्रणाली अकादमिक अवसरों के साथ-साथ जवाबदेही निर्धारित करने में सहायक होगी, इसके अतिरिक्त पेशेवर विकास हेतु गंभीर शिक्षकों को अभिप्रेरित करने में सहायक सिद्ध होगी।
- शिक्षकों एवं शिक्षक संघों की सहभागिता से पेशेवर आचार संहिता (Professional Ethics Code) तैयार की जाए। शिक्षक संघ इसके अनुपालन की मॉनीटरिंग करें और दुराचरण के मामलों को निबटाने में दायित्व ग्रहण करें। इसके लिए नीतिगत प्रबन्ध किए जाएँ।
- पेशेवर विकास हेतु आवश्यक अध्ययन के लिए शिक्षकों को अध्ययन अवकाश की सुविधा मिलनी चाहिए। उच्च शिक्षा में यह सुविधा उपलब्ध है। विद्यालयी शिक्षकों को भी यह सुविधा प्राप्त हो। अध्ययन अवकाश पेशेवर ज़रूरतों के लिए ही मिले इसके दुरुपयोग को रोकने के लिए सख्त मॉनीटरिंग प्रणाली अपनायी जाए।

4. परिवेदना निवारण

वर्तमान में शिक्षकों की परिवेदना निवारण हेतु कोई प्रभावी संस्थागत प्रणाली नहीं है। इसके संदर्भ में दो ध्रुवीय स्थितियाँ हैं। एक छोर पर यह विभागीय उच्चाधिकारियों की दया, विवेक एवं संवेदनशीलता पर निर्भर है, इसमें परिवेदनाओं का निवारण न्यायोचित ढंग से नहीं होता, बहुत बार होता ही नहीं, विलम्ब होता है सो अलग। वहीं दूसरे छोर पर शिक्षक संघ हैं जो वार्ता में असफल रहने पर उत्तरोत्तर धरना, प्रदर्शन, आंदोलन एवं हड़ताल का उपक्रम करते हैं। इससे बहुत बार शिक्षण प्रभावित होता है। यह शिक्षक की गरिमा एवं सम्मान के अनुकूल नहीं है और समाज भी इस तौर-तरीके से असहमति रखता है। शिक्षक संघ प्रत्येक शिक्षक की अलग-अलग परिवेदनाओं के समाधान में रुचि नहीं रखते और व्यावहारिक दृष्टि से यह संभव भी नहीं है। अतः प्रशासनिक न्यायाधिकरण की तर्ज पर शिक्षक न्यायाधिकरण (Teacher Tribunal) का गठन किया जाए। शिक्षण कार्य प्रशासन से एकदम भिन्न है, इसमें मुद्दों को अविलम्ब संबोधित करने की ज़रूरत होती है। अतः पृथक न्यायाधिकरण नितांत आवश्यक है। इसमें शिक्षक संघों की प्रभावी भूमिका निर्धारित होनी

चाहिए। यह न्यायाधिकरण त्वरित परिवेदना निवारण कर सकें, इसके लिए इनको सक्षम एवं प्रभावी बनाने हेतु नीतिगत उपाय किए जाने चाहिए।

उपरोक्त विमर्श के आधार पर हम कह सकते हैं कि भावी शिक्षा नीति में शिक्षकों की स्वतंत्रता एवं स्वायत्तता, कैरियर विकास, परिवेदना निवारण, सतत पेशेवर विकास संबंधी अपेक्षाओं से संबंधित मुद्दों को प्राथमिकता से संबोधित करने की आवश्यकता है। शिक्षक का सम्मान, समाज में गरिमापूर्ण स्थान का यशोगान से कुछ फर्क पड़ने वाला नहीं है जब तक कि इसके लिए धरातल पर कुछ ठोस न किया जाए। इसके लिए सिद्धांत गढ़ने के बजाए व्यावहारिक प्रक्रियाएँ अपनानी होंगी, शिक्षक पर विश्वास करना होगा और यकीनन शिक्षक की जवाबदेही निर्धारित करनी होगी। उपयुक्त वातावरण (Conducive Environment) सुनिश्चित करने के बाद प्रदर्शन (Performance) की कसौटी पर कसे जाने से शिक्षक को भला एतराज़ क्यों होगा ?

संदर्भ

भारत सरकार. 1986. *नेशनल पॉलिसी ऑन एजुकेशन*. मानव संसाधन मंत्रालय,शिक्षा विभाग, नयी दिल्ली.

____. 1968. *नेशनल पॉलिसी ऑन एजुकेशन*. मानव संसाधन मंत्रालय,शिक्षा विभाग, नयी दिल्ली.

____. 1992. *प्रोग्राम ऑफ़ एक्शन*. मानव संसाधन मंत्रालय, शिक्षा विभाग, नयी दिल्ली.

____. *द राइट ऑफ़ चिल्ड्रन टू फ्री एंड कंपल्सरी एजुकेशन एक्ट 2009*. भारत का राजपत्र, विधि और न्याय मंत्रालय.